REVIEW OF RESEARCH

ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 3.8014(UIF)
VOLUME - 6 | ISSUE - 4 | JANUARY – 2017

जयशंकर प्रसाद की नाट्यकला

प्रा.डॉ. मीना जाधव
जवाहर महाविद्यालय, अणदूर,

जयशंकर प्रसाद बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार थे। साहित्य के अन्य अंग कहानी, उपन्यास, निबन्ध पर भी उनकी लेखनी सक्रीय रही है लेकीन अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा वे नाट्यकार के रूप में अधिक प्रसिध्द रहें। आलोचकों का कहना है कि प्रसादजी ने जितने सुंदर गीत लिखे है, उतने ही सुंदर नाटक रचे है। प्रसाद के नाटक क्षेत्र में प्रवेश करते ही हिन्दी नाट्य–साहित्य का जैसे कायाकल्प सा हो गया। उन्होंने नई शैली में नाटक रच कर हिंदी नाटकों के पूर्ण साहित्यीक नविन रूप को प्रस्तुत किया। प्रसाद के नाटक हिंदी साहित्य के लिए अमर निधि कोष है।

जिस समय प्रसाद नाट्य–लेखन कर रहे थे उस समय भारतेंन्दु के नीलदेवी, सती प्रताप, चन्द्रावली आदि नाटक संस्कृत, बंगला और पाश्चत्य नाट् प्रवृतियों का अनुसरण कर रहे थे। पारसी नाटक कंपनियों के प्रभाव ने भारतीय नाट्य कला का दमन कर दिया था। भारतेन्दु जैसे प्रतिभाशाली नाटककार भी इस प्रवुति को रोकने में असमर्थ थे। इस समय ऐतिहासिक, पौराणिक और यथातथ्यवादी नाटक लिखे जा रहे थे। प्रसाद इन प्रवुतियों को देख परख रहे थे। उनके मन में भी भारतीय अथवा पाश्चात्य नाट्य तत्वों के चयन के लिए संघर्ष था। संस्कृत प्रणाली पर आधारित नाटक 'सज्जन' एवं पाश्चात्य प्रणाली पर आधारित नाटक 'प्रायश्चित' इसके उत्तम उदाहरण है। उन्होंने तत्कालीन परिस्थितियों का गहन अध्ययन किया। उन्होंने गंभीर ऐतिहासिक अध्ययन के आधार पर प्राचीन भारतीय गौरव, सभ्यता, संस्कृति और परंपरा का गौरवमय रूप प्रस्तुत करने वाले ऐतिहासिक नाटक लिखे जिनमें भारतीय इतिहास के उन तथ्यों पर नवीन प्रकाश डाला गया जिन्हे पाश्चात्य इतिहासकारों ने उत्यन्त भ्रान्त और विकृत रूपों मे चित्रित किया था।

भारतेन्दु युग मे मिश्रित नाट्य–शैली का प्रयोग होता रहा। लेकिन प्रसाद के आगमन के साथ ही हिंदी नाटकों का विकास अप्रत्याशित रूप से नए प्रभावों को आत्मसात करते हुए होने लगा। तत्कालीन परिस्थितियों मे प्रसाद की प्रतिभा को विकसित होने का पर्याप्त अवसर मिला। उनके आरंभिक नाटक से लेकर अंतिम नाटक के बीच उनकी नाट्यकला निरंतर विकासमान होती दिखायी देती है। उनके नाट्यविकास को तीन भागों में बांटकर देखा जा सकता है–

आरंभिक काल— सन १९१० से १९१३ तक की नाट्यकृतियाँ इसके अंतर्गत रखी जा सकती हैं। सज्जन (१९१०), प्रायश्चित (१९१२), कल्याणी परिणय (१९१२) और करूणालय (१९१३) आदि नाट्यकृतियाँ इस आरंभिक काल में देखी जा सकती है। जिसमें प्रसाद की नाट्यशैली स्थिर रूप में नहीं है। नाटकीय विषयवस्तु, शिल्प, रंगमंचीयता सभी तत्वों की दृष्टि से इसमें अपूर्णता—सी दिखायी देती है। प्रसाद के नाटकों पर संस्कृत और पारसी नाटक का प्रभाव दिखायी देता है। इन नाटकों मे प्रौढता की न्युनता है।

प्रयोग काल— सन १९१५ से १९२६ तक की नाट्य रचनाओं का समावेश इसमें किया गया है। राजश्री (१९१५), विशाख (१९२१), अजातशत्रु (१९२२) तथा जनमेजय का नागयज्ञ (१९२६) नाट्य कृतियाँ दस दौरान रची गयी। प्रसाद के नाट्य लेखन का विकास यहाँ दिखायी देता है। नाट्य तंत्र का विकसित रूप हमें दिखयी देता है। नाट्य विषय वस्तु में उनके मौलिक चिंतन और अनुभूतियोंका कलात्मक विकास दृष्टिगोचर होता है।

प्रौढकाल —सन १९२७ से लेकर १९३३ तक की नाट्य कृतियाँ इसमें आती है। कामना (१९२७), स्कन्धगुप्त (१९२८), एक घुंट (१९२९), चंद्रगुप्त (१९३२) और ध्रुवस्वामिनी (१९३३) इत्यादि नाटक इस काल में रचे गये। प्रसाद की उपरोक्त कृतियों में उनकी नाटकीय प्रतिभा अपने संपूर्ण वैभव के साथ उपस्थित हुई है। यह समय उनके नाट्यलेखन का चरमोत्कर्ष का माना जाता है। इन नाट्यकृतियों के माध्यम से प्रसाद ने मृतप्राय नाट्यकला को पुनर्जीवित ही नही किया वरन युग नियामक कृतियों से पथ प्रदर्शन भी किया।

प्रसादजी ने विशाख नाटक की भूमिका में लिखा है— 'मेरी इच्छा भारतीय इतिहास के अप्रकाशित अंश मे से उन प्रकाण्ड घटनाओं का दिग्दर्शन करने की है जिन्होने हमारी वर्तमान स्थिती को बनाने का बहुत कुछ प्रयत्न किया है और जिन पर वर्तमान साहित्य की दृष्टि कम पडती है।' स्पष्ट है कि प्रसाद के नाटकों का विषय इतिहास का अप्रकाशित अंश है।

प्रसाद इतिहास के गंभीर अध्येता रहे है। उनके ऐतिहासिक नाटक भविष्य का पथ—प्रदर्शन करने वाले है। कामना व एक घुंट को छोडकर उनके सभी नाटक पौराणिक या ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित है। उनका नाटक सज्जन महाभारत पर आधारित है। प्रायश्चित जयचंद काल पर आधारित है। करूणालय की वस्तु वैदिक काल पर तो राजश्री हर्ष काल पर आधारित है। बौध्द धर्म के पतन काल पर विशाख की कथावस्तु है तो अजातशत्रु बौध्द धर्म के आरंभ काल पर रचित है। जनमेजय का नागयज्ञ महाभारत की कथा पर आधारित है तो स्कंदगुप्त और ध्रुवस्वामिनी गुप्त काल पर रचित है। चंद्रगुप्त नंद वंश के अंत और मौर्य वंश के उदय की घटनाओं पर आधारित है। उन्होंने अपने नाटकों की विषय सामग्री भारत के उस स्वर्ण युग से संकलित की है जो केवल भारत के लिए ही नही संपूर्ण विश्व के लिए आदर्श और आकर्षण का केन्द्र रही है।

प्रसादजी भारतीय संस्कुति के प्रति श्रध्दा रखने वाले निष्ठ व्यक्ति थे। भारतीय संस्कृति के प्रति अपना अगाध प्रेम व्यक्त करते हुए वे लिखते है कि—'यह संस्कृति विश्ववाद की विरोधिनी नहीं है, क्योंकी इसका प्रयोग तो मानव मानव समाज मे सीमित मनोभावों को सदा प्रशस्त और विकासोन्मुख बनाने के लिए होता है। संस्कृति का सामुहिक चेतना और मनोभावों से मौलिक सम्बन्ध होता है।' उन्होने अपने नाटक भारतीय संस्कृति की वैभवशाली झांकी प्रस्तुत करते हुए लिखे है। प्राचीन भारत के इतिहास का उन्होने गहराई से अध्ययन किया था। डॉ. नगेंद्र का विचार है की उनके पुरातत्व के ज्ञान का आधार प्राचीन शिलालेख, पाणिनी का व्याकरण, पतन्जली का योग, कौटिल्य का अर्थशास्त्र आदि प्राचीन ग्रंथ रहे है। उनका अध्ययन बहुत गहरा था। हिंदु युग उनके आकर्षण का केन्द्र बिंदु था- जब गौतम बुध्द सदृष्य महान आत्माएँ, चंद्रगुप्त और अशोक जैसे सम्राट, कालीदास भास और बाण जैसे साहित्यकार इस भूमि जर हुए।

प्रसादजी आर्य संस्कृति यानि वैदिक दर्शन और बौध्द दर्शन से अत्यधिक प्रभावित थे। उनका इन दोनों दर्शनों का गहन अध्ययन था, इन दोनों दार्शनिक प्रवृतियों का इनके नाटकों मे महत्वपूर्ण स्थान है।